Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 8, Issue - 4, April - 2025

DOIs:10.2018/SS/202504013 --:-- Research Paper / Article / Review

भोजपुरी जनवादी उपन्यास 'करेजा के काँट' का समीक्षात्मक विवेचन

राजेश कुमार
शोध छात्र, स्नातकोत्तर भोजपुरी विभाग
वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार
Email - adityay330@gmail.com

शोध सार :- डॉ. अरुण मोहन 'भारवि' एक सुलझे हुए लेखक और साहित्य-संस्कृति के एक सजग कार्यकर्ता भी हैं। इन्होंने सामाजिक सरोकार से जुड़े विषयों पर खूब जम कर कलम चलाया है। 'करेजा के काँट' कथाकार भारवि का राजनीतिक उपन्यास है और इसे भोजपुरी का प्रथम जनवादी उपन्यास कहा गया है। इसकी पृष्टभूमि नक्सलवाद है। इस उपन्यास में दीपक नामक एक नौजवान को केंद्र मे रख कर कहानी तैयार की गई है। जयप्रकाश नारायण की सम्पूर्ण क्रांति आन्दोलन की छाप इस पर है। लेखक ने इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और जेल यात्रा भी की। यह ऐसा काँट है जो करेजा में धँसा है, तिल-तिल कर कसक रहा है, निकालें पर निकलता नहीं बस रिसता रहता है। इसी टीस और व्याकुलता को इसमें लेखक ने व्यक्त किया है। उपन्यास की शुरुआत जाड़े की सुबह से होती है, जब दीपक नामक युवक सेठ के यहाँ डकैती डालते गिरफ्तार किया गया है, और थाने में उसकी जमकर पिटाई की गई है। यहीं से चर्चा का बाजार गर्म होता है, कुछ दीपक को डकैत कहते हैं, कुछ नक्सलाइट तो कोई उसे गरीबों का मसीहा मानता है।

बीज शब्द : व्यक्तित्व, जनवादी, ऐतिहासिक, राजनीतिक, नक्सलाइट, आन्दोलन, सहानुभूति, कथानक, रंगदारी, जिम्मेदारी ।

1. मूल आलेख :- डॉ अरुण मोहन 'भारवि' भोजपुरी के बहुआयामी व्यक्तित्व सम्पन्न रचनाकर हैं। ऐसे तो इन्होंने अपनी साहित्य साधना को मुख्य विधा के रूप में कथा-साहित्य को चुना है, लेकिन उसके साथ-साथ रिपोतार्ज, समीक्षा, आलोचना और साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में भी अपनी सक्रियता प्रदर्शित करते रहे हैं। भारवि की उपन्यास यात्रा का आरम्भ सन् 1973 में पहला उपन्यास 'डँहकत पुरवइया' से होती है, जो भोजपुरी का प्रथम यथार्थवादी उपन्यास माना जाता है। उसके बाद एक से बढ़कर एक उपन्यास- परशुराम (भोजपुरी का प्रथम पौराणिक उपन्यास), करेजा के काँट (भोजपुरी का प्रथम जनवादी उपन्यास) और राख भउर आग (भोजपुरी का प्रगतिशील चेतना से लैस उपन्यास) जैसे उपन्यासों की रचना की जिससे भोजपुरी साहित्य के क्षेत्र में भारवि ने अपनी एक अलग पहचान बनाई।

'करेजा के काँट' डॉ अरुण मोहन 'भारवि' का तीसरा उपन्यास है। इसमें अपने युग का अत्यंत ज्वलंत समस्याओं को उठाया गया है। इसे भोजपुरी में पहला ऐसा उपन्यास कहा जा सकता है, जिसमें अपने समय का एक ऐतिहासिक, राजनीतिक घटनाक्रम को विषय बनाया गया है और रचनाकार के तरफ से उसके मूल में विधमान कारण को रेखांकित करने का एक छोटा सा सफलतम प्रयास किया गया है। लेखक के अनुसार 'करेजा के काँट' तीसरा उपन्यास है लेकिन इसे भोजपुरी का पहला 'जनवादी' उपन्यास माना जाता है, जो नक्सलाइटों की जिन्दगी के आड़ में सन 1975 ई में लिखा गया। ऐसे तो पूरा का पूरा उपन्यास काल्पनिक है, लेकिन यथार्थ की धरती पर खड़े होने के कारण इसमें इमरजेंसी का गुस्सा, और 'भोजपुरी कहानियाँ' बनारस के उपन्यास अंक में छपने की घोषणा के बाद भी यह नहीं छप सका और वैसे हीं पड़ा रहा। आगे चल कर सन् 1993 से 'बंग भोजपुरी साहित्य परिषद' की पत्रिका 'भोजपुरी माटी' में इसे धारावाहिक रूप में प्रकाशन किया गया और वही से 1985 में पुस्तकाकार प्रकाशन भी हुआ।

'भोजपुरी साहित्य के इतिहास' के नामचीन लेखक डॉ अर्जुन तिवारी 'करेजा के काँट' पर अपनी बेवाक नजर डालते हुए लिखते हैं कि यह भोजपुरी जनवादी उपन्यास है। इसमें सड़े-गले समाज के ऊपर एक नया समाज बनाने के लिए सरस्वती के साधकों से अपील किया है-

'बनी नया समाज कब - समाज ई पुरान बा।
जहाँ अमीर सो रहल - तहाँ गरीब रो रहल।
जहाँ अमीर के महल - गरीब के मचान बा।
अनेक भोग बा कहीं - उपास लोग बा कहीं।
जहाँ कि डेग-डेग पर - लुटा रहल किसान बा।
बनी नया समाज कब - समाज ई पुरान बा।'

महर्षि विश्वामित्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बक्सर के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. त्रिलोकीनाथ पाण्डेय लिखते हैं की 'करेजा के काँट' को भोजपुरी में पहला जनवादी उपन्यास माना जाता है, जो नक्सलाइट गतिविधिओं पर केन्द्रित है। जयप्रकाश नारायण की सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन की छाप इस पर है। लेखक ने इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और जेलयात्रा भी की। उपन्यास की पृष्टभूमि और रूपरेखा लेखक के मानस में बक्सर सेंट्रल जेल में बंदी के दिनों में ही पड़ी और लेखनी पर चढ़कर स्पष्ट हुई बाद में। प्रकाशन की असुविधाओं के कारण यह बाद में प्रकाशित हुआ। यह ऐसा काँट है जो करेजा में धँसा है, तिल-तिल कर कसक रहा है, निकाले पर निकलता नहीं बस रिसता रहता है। इसी टीस और व्याकुलता को इसमें लेखक ने व्यक्त किया है। व्यथा ने कथा का रूप ले लिया है।

सन 1967-1968 के आस-पास देश की राजनीति में तब एक जबरदस्त भूचाल आ गया था, जब बंगाल में नक्सलबाड़ी नामक स्थान पर सशस्त्र क्रांति का आह्वान किया गया और भारतीय राजसत्ता को बलपूर्वक उखाड़ फेंकने की कोशिश की गई थी। उस समय 1967 के आम चुनाव के बाद देश के नौ राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकार बनी थी। नक्सलवादी का विद्रोह तत्कालिक रूप से तो उस समय दबा दी गई थी, लेकिन धीरे-धीरे उसकी आग बंगाल से बाहर बिहार, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब जैसे राज्यों में फैलने लगा। जून 1975 में लगी 'इमरजेंसी' से पहले उसकी धमक लगभग चारों तरफ सुनाई पड़ने लगी। राजसत्ता का जन्म बंदूक की नली से होता है, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के चेयरमैन भाओत्सेतुंग हमारे भी चेयरमैन थे, और चीन का रास्ता हमारा रास्ता है- जैसे राजनीतिक स्लोगनों के चलते उस आन्दोलन की अनुगूंज देश के बाहर भी फैल गई थी। इस आन्दोलन ने उस समय के लगभग वैसे सभी छात्रों, नौजवानों को अपनी ओर आकृष्ट किया था, जिसमें थोड़ा बहुत भी राजनीतिक विवेक था। वैसे प्रायः सभी लोग उसके प्रति सहानुभूति रखते थे, जो देश के आजाद हुए बीस वर्ष बाद भी देश की हालत में कुछ खास सकारात्मक-जन कल्याणकारी बदलाव नहीं होने के चलते निराश-हताश होने लगे थे। इसी पृष्टभूमि से देश में नक्सलवादी आन्दोलन विकसित हुआ था, जिसमें बिहार के तत्कालीन शाहाबाद जिला (भोजपुर, बक्सर, रोहतास और कैमूर) भी अछूता नहीं रहा था। इस आन्दोलन को केंद्र में रख कर उस दौर में और उसके बाद बहुत से साहित्यिक कृतियों की रचना देश में हिन्दी साहित्य प्रायः सभी भाषाओं में हुआ। भोजपुरी में तब के चर्चित कवि पत्रकार स्व० चितरंजन जी उसी दौर में अपनी बहुचर्चित कविता 'नक्सलबाड़ी' की रचना कर दिया था, जिसमें 'जुल्म के गर्दन पर तना गंड़ासा' का नाम है नक्सलबाड़ी कह कर उस आन्दोलन को अपने समझ से परिभाषित करने का प्रयास किया था।

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा के पूर्व भोजपुरी विभागाध्यक्ष और नामचीन समालोचक डॉ. नीरज सिंह के राय में डॉ भारवि का भोजपुरी उपन्यास 'करेजा के काँट' की रचना भी इसी पृष्टभूमि में हुआ था। 'करेजा के काँट' रचना भूमि तत्कालीन शाहाबाद जिले के बक्सर अनुमंडल (आज का बक्सर जिला) में घटित घटनों पर केन्द्रित है। इस उपन्यास में दीपक नामक एक नौजवान को केंद्र मे रख कर कहानी तैयार की गई है, जो अपनी माँ बाप का इकलौता संतान था। बक्सर शहर के एक प्रमुख कॉलेज में इतिहास विषय का एक ईमानदार प्रोफेसर कर्तव्यपरायण और लोकप्रिय प्रोफेसर का बेटा दीपक के जीवन शुरू से हीं कष्ट और अभाव में व्यतीत होता रहा। दीपक के पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गया था, जिसके बारे में उसे कुछ याद नहीं था, याद था तो बस अपने अभाव और कष्ट कठिनाई से मरा जिंदगी और अपनी माँ की अनवरत संघर्ष, इसी अभाव और कष्टों की आंच में तप कर दीपक के अंदर एक संघर्षशील व्यक्तित्व का विकास हो रहा है। अपने पिता से विरासत में मिली ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा और माँ के मेहनत, मजदूरी कर परिवार चलाने का संकल्प, साधना उसे बचपन से हीं विवेक सम्पन्न और साहसी बना दिया। इसी के बदौलत वह मैट्रिक में पढ़ाई करने के समय से हीं जिम्मेदारी, कर्तव्यनिष्ट और स्वाभिमानी बन गया था।

अपने मकान मालिक के नाजायज धौंस जमाने के बाद उसका मनोबल और बढ़ गया। और इतना बढ़ गया की कॉलेज में बिगड़े और मनबढ़ू लड़कों का जो जमात बना कर रंगदारी करने वाला कपाड़िया सेठ का बेटा अमित और उसके दोस्तों का आतंक

राज को अपने दोस्तों के साथ मिल कर खात्मा कर दिया। इसके बाद दीपक के जिंदगी में कितनी ऐसी घटना लगातार घटती जाती रही, जिसके चलते उसका जिंदगी का इतिहास, भूगोल सब बदल जाता है। पढ़ाई खत्म होने के बाद दीपक को एक कॉलेज में क्लर्क की नौकरी मिल जाती है, लगातार इलाज कराने के बाद भी अपनी माँ को नहीं बचा पाना, उसके पहले हीं माँ के दबाव में अपनी जीवन संगिनी के रूप में मुहल्ले की एक लड़की रानी का चुनाव, क्रांतिकारी नेता रघुवीर जी से भेंट और उनके विचारों और कार्य प्रणाली से दीपक का प्रभावित होना, माँ के मरने के बाद उनके मौत के कारण के रूप मे कृष्णा मेडिकल स्टोर से खरीदी गई दवा का नकली होने का पता चलना, दीपक द्वारा अपनी माँ की मौत का बदला लेने का प्रण करना, मित्र रामधनी के सहयोग से कृष्णा मेडिकल स्टोर में उसके मालिक और बेटा समेत बम से उड़ा देना, गरीब-गुरबा लोगों की बेटियों के विवाह में मदद करने के लिए मुनाफाखोर-जमाखोर सेठों से जबरदस्ती धन वसूलना, कपाड़िया सेठ के यहाँ दीपक और उसके टीम के साथ धावा बोलना और उसी दौरान पुलिस से गिरफ्तार होना, कोर्ट-कचहरी की कार्यवाही, डी.एस.पी. अस्थाना की घूसखोरी, पक्षपात और अत्याचार, मित्रों के सहयोग से दीपक का जेल से दीवाल फांद कर गंगा पार कर जाना और उजियार घाट पहुंचना और वहाँ से गोरखपुर के रास्ते नेपाल भागने की तैयारी, लेकिन योजना में सफल नहीं होना और फिर से पुलिस के गिरफ्त में दीपक का आने के साथ हीं उपन्यास की समाहित इसी छोटे बड़े घटनों से उपन्यास 'करेजा के काँट' की कथानक के निर्माण किया गया है। उपन्यास में यह सभी घटना कोई सिलसिलेवार रूप में नहीं आया है। थाने में बंद दीपक अपने अतीत को याद करता है। उसी क्रम में उसको अपने बचपन से लेकर कपाड़िया सेठ के यहाँ पकड़ाने तक की घटना शामिल है। जैसे 'अगेय' का उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' में शेखर अपनी गुजरे जीवन को याद करता है, उसी तरह से दीपक भी स्मृत्यालोकन करता है। लेकिन उपन्यास के कथा की शुरुआत और आखिरी भाग नाटकीय और वर्तानात्मक शैलियों के संयोग से लिखा गया है। अन्ततः एक शृंखलाबद्ध कथानक का स्वरूप निखर कर सामने आ जाता है।

इस उपन्यास की सबसे बड़ी खासियत यह है की उपन्यास अपने को पढ़वा लेता है, जिसके केंद्र में कथानायक दीपक का जीवन है। कथानक का इकहरापन के चलते इस उपन्यास में पात्रों की संख्या की ज्यादा भीड़ नहीं है। दीपक, उसके माता और अप्रत्यक्ष रूप से कभी-कभी उसके पिता, अनिल कपाड़िया और उसके बदमास दोस्त, कपाड़िया सेठ, डी. एस. पी. अस्थाना, रानी और उसका भाई, दीपक का दोस्त रामधनी, दुखी पाण्डेय, रघुवीर जी और डॉक्टर शुक्ला जैसे लगभग डेढ़ दर्जन इस उपन्यास में पात्रों की संख्या है, जिसमें एक मात्र दीपक हीं ऐसा पात्र है, जिसका चरित्र पूरा उभर कर सामने आया है। वह एक परिश्रमी, प्रतिभाशाली, ईमानदार, देश और समाज के प्रति पुरी तरह से जागरूक, गरीब, असहाय लोगों के प्रति सहानुभूतिशील चरित्रवान व्यक्ति के रूप में सामने आया है, जिसमें साहस, त्याग और सेवा भाव कूट-कूट कर भरा है। वैसे तो इस उपन्यास की कथा भूमि बक्सर है, वहाँ के चौक बाजार का चर्चा भी इसमें है लेकिन बक्सर के जिंदगी का कोई खास झलक इसमें नहीं मिल रहा है। यह इस उपन्यास का कमजोर पक्ष कहा जा सकता है। इसमें जो परिवेश चित्रित हुवा है वह पटना, आरा, छपरा कहीं का हो सकता है। बहरहाल इस उपन्यास का सबसे मजबूत पक्ष इसका संवाद और भाषा-शैली है। पात्रों की बात-चीत से उन सबकी समूची व्यक्तित्व का उजागर हो जा रहा है। उपन्यास की भाषा पात्रों के व्यक्तित्व के अनुकुल है। उपन्यास में वर्णात्मक, नाटकीय, स्मृत्यावलोकन जैसे कितने शैलियों का प्रयोग हुवा है।

इस उपन्यास में उपन्यासकार ने एक नया प्रयोग किया है। इस तरह का प्रयोग भोजपुरी में कौन कहे हिन्दी उपन्यासों में भी शायद ही देखने को मिलता है। काव्य में एक अलंकार होता है- 'रशनोपमा'। रशना का अर्थ होता है करधनी, कमरकस। जिस तरह रशना में कई कड़ियो की लड़ी बनता है, वैसे हीं इस अलंकार में कई वस्तु उपमेय-उपमान के रूप में एक सिंकड़ी जैसा बनता है, इसीलिए इसे 'रशनोपमा' अलंकार कहा जाता है। जैसे-

"मति सी नति, नति सी बिनती, बिनति सी रत्ति चारु।
रति सी गति, गति सी भगति, तो में पवनकुमार।।"

यह काव्य का चीज है लेकिन उपन्यासकार भारवि ने इसे उपन्यास में उतारा है। इसका नाम 'रशना शैली' रखना ठीक होगा। पूरा का पूरा उपन्यास एक सिंकड़ी के जैसा गूथा है। जिस वाक्य से पहला अंक खत्म होता है उसी से दूसरा अंक शुरू होता है, और दूसरा वाक्य जिस वाक्य से खत्म होता है फिर वहीं से तीसरा वाक्य शुरू हो जाता है।

भोजपुरी के नामचीन समालोचक महेश्वराचार्य के नजर में 'करेजा के काँट' जनवादी उपन्यास है। इसमें जनवाद का स्वर मुखरित है। जे.पि. आंदोलन में लेखक ने भाग लिया था और जेल यात्रा भी की थी। उसी समय यह उपन्यास लिखा गया था। इस उपन्यास की खूबी है, इसकी रचना शैली। प्रेमचन्द की तरह भाषा है, चलती और मुहावरेदार।

2. निष्कर्ष :- निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है की 'करेजा के काँट' डॉ भारवि के उपन्यास लेखन की शुरुआती दौर का एक सफल और दमदार उदाहरण कहा जा सकता है, जिसमें अपने समय का एक बहुचर्चित राजनीतिक आन्दोलन को विषय बनाने का साहस काम किया गया है, और उस आन्दोलन का सैद्धांतिक पृष्टभूमि का व्यावहारिक धरातल पर उतारने का एक रोचक और काफी हद तक विश्वसनीय कथा-प्रसंग को उकेरा गया है। अपनी इस विशेसता के चलते इसको भोजपुरी उपन्यास के विकास यात्रा में एक महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी माना जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अरुण मोहन 'भारवि' (1985), करेजा के काँट, अरुणोदय प्रकाशन, बक्सर.
2. डॉ. नीरज सिंह (2019), गधपूरना पत्रिका (नवम्बर), अरुणोदय प्रकाशन, बक्सर.
3. डॉ. अर्जुन तिवारी (2021), गधपूरना पत्रिका (मार्च), अरुणोदय प्रकाशन, बक्सर.
4. महेश्वराचार्य (2013), जब तोप मोकाबिल हो, अरुणोदय प्रकाशन, बक्सर.
5. डॉ. त्रिलोकीनाथ पाण्डेय (2018), त्रिवेनी, अरुणोदय प्रकाशन, बक्सर.